TATTVA KRISHNA CENTRE
BANGALORE

000781

तुलसी राम कथा

राम-वनगमन

Gandhi Smarak Nidhi
Karnatak Shakha
NEHRU CIRCLE
BANGALORE-3.

O152,ITUL
W3N58
H.000781

000781

तुलसी-राम-कथा–४

राम-वनगमन

विश्वम्भरसहाय 'प्रेमी'

TATTVA PRACHAR CENTRE
BANGALORE

GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA
DATE........
ACC. No. 9020
CALL No........
BANGALORE-1.

तुलसीदासजी के 'रामचरित-
मानस' के आधार पर
भगवान राम की
सरल एवं रोचक कहानी

सत्साहित्य प्रकाशन
१९५७

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA
DATE........................
ACC. No..............................
CALL No.......................
BANGALORE-1.

H·000781
O152,1TUL
W3N58

पहली बार : १९५७
मूल्य
छः आना

मुद्रक
नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स
दिल्ली

GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA
DATE..........................
ACC NO..............................
CALL NO..........................
BANGALORE-1.

C00781

प्रकाशकीय

हमारे देश में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा, जिसने राम का नाम न सुना हो और राम-कथा से परिचित न हो। क्या अमीर, क्या गरीब; क्या छोटा, क्या बड़ा; क्या शहरी, क्या ग्रामीण; सभी राम का नाम सुनकर गद्गद् हो जाते हैं। उनके नाम में कुछ ऐसा जादू है कि एक बार सुनकर तृप्ति नहीं होती, बार-बार सुनने को जी चाहता है।

हमारी बहुत दिनों से इच्छा थी कि राम-कथा के मुख्य-मुख्य प्रसंग लेकर इस ढंग से प्रस्तुत करें कि सामान्य पढ़े-लिखे पाठक भी उन्हें आसानी से समझ सकें और उसमें रस ले सकें। इसी उद्देश्य को सामने रखकर इस पुस्तकमाला का श्रीगणेश किया जारहा है। 'रामायण' में पूरी राम-कथा दी हुई है। उसीमें से क्रम-बद्ध घटनाएं लेकर ये पुस्तकें तैयार की गई हैं। पाठकों के लाभ और विषय की रोचकता की दृष्टि से बीच-बीच में कुछ चौपाइयां दोहे भी डाल दिये गये हैं।

हमें विश्वास है कि यह माला पाठकों को पसंद आयगी और वे इसको घर-घर पहुँचाने में मदद देंगे।

प्रत्येक पुस्तक में कुछ चित्र भी दिये गए हैं।

—मंत्री

ಕರ್ನಾಟಕ ಗಾಂಧೀ ಸ್ಮಾರಕ ನಿಧಿ (ರಿ)
ಪರಿಗ್ರಹಣ ಸಂಖ್ಯೆ:
ACC. No.:
ಗಾಂಧೀ ಗ್ರಂಥಾಲಯ, ಬೆಂಗಳೂರು-1

GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA
DATE....................
ACC NO..............................
CALL NO.....................
BANGALORE-1.

विषय-सूची

१.	राज-तिलक का विचार	५
२.	मंथरा की कुटिलता	७
३.	कैकेयी का दुराग्रह	१०
४.	पुत्र की कर्त्तव्य-निष्ठा	१५
५.	सीताजी को रोकने का प्रयत्न	१९
६.	लक्ष्मण भी तैयार हो गए	२२
७.	माता-पिता और पुरवासियों की वेदना	२६
८.	प्रस्थान	२८

GANDHI SMARAKA GRANTHA
DATE........................
ACC No.........................
CALL No........................
BANGALORE-1.

राम-वनगमन

: १ :

राज-तिलक का विचार

रामचंद्रजी जब विवाह करके अयोध्या लौट आये तो चारों ओर आनंद-ही-आनंद छा गया। सभी पुरजन बहुत प्रसन्न हुए। मातासहित पिता दशरथ भी बहुत प्रसन्न हुए। अब तो सबके मन में एक यही अभिलाषा थी कि राजा अपने जीतेजी राम-चंद्रजीको युवराज-पद दे दें। महाराज दशरथ राज-दरबार में बैठे हुए रामचंद्रजी के यश की नित-नई कहानियां सुनते और मन-ही-मन प्रमुदित होते थे।

एक दिन उन्होंने जब दर्पण में अपना मुंह देखा तो देखा कि कानों के पास कुछ बाल सफेद हो गए हैं, मानो बुढ़ापा उन्हें उपदेश दे रहा था—'हे राजन्, रामचंद्रजी को युवराज-पद देकर अपने जीवन का लाभ क्यों नहीं लेते !'

श्रवन समीप भये सित केसा,
मनहुं जरठपनु अस उपदेसा।
नृप जुबराजु राम कहुं देहू,
जीवन जनम लाहु किन लेहू ॥

यह विचार मन में आते ही महाराज गुरू वशिष्ठ के पास पहुंचे और निवेदन किया, "गुरूदेव, अब मैं रामचंद्रजी को युवराज बनाना चाहता हूं। आपकी आज्ञा हो तो राजसभा में इसकी चर्चा करूं।"

गुरू वशिष्ठ बोले, "राजन्, देर करने की आवश्यकता नहीं है। शीघ्र तैयारी कीजिए। जिस दिन रामचंद्रजी युवराज हों, उसी दिन को शुभ और मंगलमय दिन समझिए।"

महाराज प्रसन्न होकर महलों में लौटे और उन्होंने मंत्रियों को बुलाया। मंत्री और दूसरे पंच लोग यह समाचार सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने राजा से कहा, "राजन्, इस मंगल काम को करने में अब देर न कीजिए। यह विचार बहुत अच्छा है।"

मंत्रियों की ऐसी राय सुनकर राजा का आनंद और भी बढ़ गया और उन्होंने गुरू वशिष्ठ की आज्ञानुसार राजतिलक की तैयारी आरंभ कर दी। संपूर्ण तीर्थों का जल, ओषधि, फल, पत्र-पुष्प आदि अनेक मांगलिक वस्तुएं मंगाने का प्रबंध किया गया। मृग-चर्म, अनेक प्रकार के ऊनी और रेशमी वस्त्र और मणियां, ये सब मंगाई जाने लगीं। नगर को खूब सजाया गया। गणेश और कुल-देवता की पूजा की जाने लगी। मनोहर चौक सुंदर मणियों से पुरवाये जाने लगे। अवध-भर में बड़ी धूमधाम से बधावे बज उठे। स्वयं रामचंद्रजी और सीताजी के शरीर में शुभ लक्षण प्रकट होने लगे। जब यह समाचार माताओं को मिला तो वे भी बहुत प्रसन्न हुईं। मंगल-कलश सजाने लगीं। उन्होंने ग्राम-देवियों की पूजा की और रामचंद्रजी के कल्याण के लिए वर मांगा।

तभी गुरू वशिष्ठ रामचंद्रजी को समय के अनुसार उपदेश देने के लिए उनके महलों में पहुंचे। सीतासहित रामचंद्रजी ने इस आगमन पर उनका बड़ा उपकार माना। वह अपने कर्तव्य को समझते थे, लेकिन उनके मन में एक दुःख भी था। वह जानते थे कि हम सब भाई एक साथ जन्मे, खेले-कूदे, बड़े हुए, यज्ञो-पवीत और विवाह सब एक साथ ही हुए, लेकिन अब यह कैसी

अनुचित बात हो रही है कि राज्याभिषेक अकेले मेरा ही हो रहा है।

जनमे एक संग सब भाई।
भोजन सयन केलि लरिकाई॥
करनबेध उपबीत बिआहा।
संग संग सब भये उछाहा॥
बिमल बंस यहु अनुचित एकू।
बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू॥
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई।
हरउ भगत मन कै कुटिलाई॥

रामचंद्रजी के मन में ऐसा खेद होना स्वाभाविक था। लेकिन उनके दूसरे भाई उनके युवराज होने से बहुत प्रसन्न थे। अयोध्यापुरी आनंद में मग्न होकर भरत के आने की राह देख रही थी। चारों ओर आनंद-ही-आनंद छा रहा था।

: २ :

मंथरा की कुटिलता

लेकिन इस आनंद के बीच वहां एक ऐसा व्यक्ति भी था, जिसका हृदय यह आनंद देखकर जल रहा था। वह थी रानी कैकेयी की मुंहलगी दासी कुबड़ी मंथरा। जब उसने यह सुना कि रामचंद्रजी का राज-तिलक हो रहा है तो वह और भी जल उठी। वह तुरंत भरतजी की माता कैकेयी के पास पहुंची और दिखावे के लिए आंसू बहाने लगी।

रानी ने हँसकर कहा, "तू बड़े गाल बजाया करती है। मालूम होता है, आज लक्ष्मण ने तुझे कुछ सीख दी है।" इसपर

भी वह दुष्टा कुछ नहीं बोली। ऐसे सांस छोड़ती रही, जैसे काली नागिन फुफकार रही हो।

हँसि कह रानि गालु बड़ तोरें।
दीन्ह लखन सिख अस मन मोरें।।
तबहुं न बोल चेरि बड़ि पापिनि।
छाड़इ स्वास कारि जनु सांपिनि।।

यह देखकर रानी का मन भी शंका से भर उठा और वह महाराज और अपने पुत्रों का कुशल-समाचार पूछने लगीं। इसपर मंथरा ने कहा—"कुशल तो कौशल्या की है। नगर की शोभा देखो न। तुम्हारे पुत्र ननिहाल गये हुए हैं और रामचंद्रजी को युवराज बनाया जा रहा है।"

यह सुनकर रानी बहुत क्रुद्ध हुई और मंथरा को धमकाने लगी—"काने, लंगड़े और कुबड़े बड़े कुटिल होते हैं; उनमें भी स्त्री और फिर दासी! अरे, यदि सचमुच कल ही राम का राजतिलक है तो मांग तू क्या मांगती है। वही दूंगी। राम तो मुझे विशेष रूप से प्यारे हैं। मैं तो भगवान से यही चाहती हूं कि मुझे फिर से जन्म दे तो मेरे राम-जैसा पुत्र उत्पन्न हो।"

लेकिन मंथरा पर इन बातों का कोई असर न हुआ। वह और भी जली-कटी बातें सुनाने लगी—"तुम राजा को अपने वश में समझती हो, लेकिन राम की मां बड़ी चालाक है। यह सब चाल उसीकी है, नहीं तो भला भरत को ननिहाल भेजकर राम को युवराज क्यों बनाया जाता? राजा तुमको बहुत चाहते हैं, यह बात कौशल्या नहीं सह सकती।"

इसी प्रकार जब उसने सौतिया डाह की बहुत-सी बातें कहीं तो कैकेयी को भी विश्वास होने लगा। आखिर वह नारी ही तो

थी ! बह गई। बोली, "मंथरा, तेरी बात सत्य है। मेरी दाहिनी आंख रोज फड़का करती है। मैं रात-दिन बुरे सपने देखती हूं,

मंथरा ने कैकेयी के खूब कान भरे।

किंतु किसीसे कहती नहीं हूं। मैं भले ही नैहर में रहकर जीवन बिता दूं, पर जीते-जी सौत की चाकरी नहीं करूंगी। भाग्य जिनको शत्रु के वश में रखकर जिलाता है, उनके लिए मर जाना ही अच्छा है।"

नैहर जनमु भरब बरु जाई।
जिअत न करबि सवति सेवकाई॥
अरि बस दैउ जिआवत जाही।
मरनु नीक तेहि जीवन चाही॥

: ३ :

कैकेयी का दुराग्रह

रानी जब इस प्रकार मंथरा के वश में आगई तो उसने कहा, "तुमने मुझे एक बार एक कहानी सुनाई थी। तुम्हारे दो वचन राजा के पास धरोहर हैं। आज उन्हें राजा से मांगकर अपनी इच्छा पूरी करो। भरत को राज और राम को वनवास, ये दो वचन मांग लो और सौत का सारा आनन्द छीन लो। कोप-भवन में चली जाओ और राजा जब सौगंध खा लें तभी उनको अपने मन की बात बताओ।"

रानी ने ऐसा ही किया। उसकी बुद्धि नष्ट होगई थी। जब चारों ओर आनंद छा रहा था तब उसका हृदय जल रहा था। कुसंगति में पड़कर कौन नहीं बिगड़ जाता ? संध्या के समय जब राजा दशरथ महलों में आए तो वह सहम उठे। कैकेयी की दशा देखकर उन्हें बहुत दुःख हुआ। पूछने लगे, "हे प्रिये, तुम किसलिए रूठी हो ? तुम मुझे अपने क्रोध का कारण तो बताओ, किसने तुम्हारा बुरा किया है ? किसके दो सिर हैं ? किसकी मौत आई है ? कहो, किस कंगाल को राजा बना दूं या किस राजा को देश से निकाल दूं ? तुम्हारा शत्रु देवता ही क्यों न हो, मैं उसे भी मार सकता हूं, फिर नर-नारी की तो बिसात ही क्या है ?"

इस प्रकार राजा के बार-बार कहने पर और सौगंध खाने पर मंदबुद्धि कैकेयी उठी और बोली, "आप बार-बार 'मांग-मांग' तो कहा करते हैं, लेकिन लेते-देते कुछ नहीं। आपने दो वरदान देने को कहा था। उनके मिलने में भी संदेह है।"

राजा ने हँसकर कहा, "मैं तुम्हारा मतलब समझ गया।

मान करना तुम्हें बड़ा अच्छा लगता है। तुमने उन वरों को मेरे पास धरोहर रखकर कभी मांगा ही नहीं। मेरा स्वभाव भूलने का है, इसलिए मुझे भी याद नहीं रहा। तुम मुझे झूठ-मूठ दोष न दो। चाहे दो के बदले चार मांग लो, रघुकुल की सदा से यही रीत चली आ रही है कि प्राण भले ही चले जायं, लेकिन वचन कभी नहीं जाता।"

मागु मागु पै कहहु पिय कबहुं न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुइ तेउ पावत संदेहु॥
जानेऊं मरम राउ हँसि कहई।
तुम्हहि कोहाब परम प्रिय अहई॥
थाती राखि न मांगिहु काऊ।
बिसरि गयउ मोहि भोर सुभाऊ॥
झूठेहुं हमहि दोषु जनि देहू।
दुइ के चारि मांगि मकु लेहू॥
रघुकुल रीति सदा चलि आई।
प्रान जाहिं बरु बचन न जाई॥

इस प्रकार बात पक्की करके वह दुर्बुद्धि कैकेयी हँसकर बोली, "महाराज, सुनिए, मेरे मन को प्रसन्न करनेवाले दो वर आप मुझे दीजिए। पहला, भरत को राजतिलक हो और दूसरा यह कि तपस्वियों का भेस धरकर राम चौदह वर्ष तक वन में निवास करें।"

कैकेयी के वचन सुनकर राजा एकाएक सहम गए और कुछ कह न सके, मानो बाज बटेर पर झपटा हो, मानो ताड़ के पेड़ पर बिजली गिरी हो। उनका रंग उड़ गया। उन्होंने आंखें बंद कर लीं और माथे पर हाथ रखकर सोचने लगे—'हाय, मेरा मनोरथ-

रूपी कल्पवृक्ष फल-फूल रहा था, लेकिन इस कैकेयी-रूपी हथनी

आपने दो बरदान देने को कहा था ।

ने उसे जड़समेत उखाड़ डाला। स्त्री का विश्वास करके में मर गया।'

राजा को इस प्रकार सोच में देखकर कैकेयी और भी क्रुद्ध हो उठी। बोली, "आप तो रघुवंश में सत्य प्रतिज्ञावाले प्रसिद्ध हैं। या तो 'हां' कीजिए, नहीं तो 'नाहीं' कर दीजिए। अभी तो

बड़ी-बड़ी बातें कर रहे थे। शायद मन में सोचा होगा कि मैं चबैना मांगनेवाली हूं। आप वर नहीं देते, न दीजिए, सत्य को छोड़ दीजिए और जगत में अपयश के भागी बनिए।"

ऐसे कुटिल वचन बोलती हुई कैकेयी ऐसी लग रही थी, मानो क्रोधरूपी तलवार म्यान से बाहर निकल आई हो। महाराज ने फिर भी बड़े प्यार से उसे समझाया, "मैं शंकर को साक्षी करके कहता हूं कि राम और भरत दोनों मेरी दो आंखें हैं। दोनों मेरे लिए समान हैं। राम को राज्य का लोभ नहीं है। कौशल्या ने भी मुझसे कभी कुछ नहीं कहा। मैं तुमसे पूछना भूल गया, यह मेरा दोष है, लेकिन अब तुम क्रोध छोड़ दो। मैं भरत को युवराज बना दूंगा, पर दूसरा वर तुमने बड़ी अड़चन का मांगा है। तुम तो राम को कौशल्या से भी ज्यादा प्यार करती हो। फिर तुम उसे वन क्यों भेज रही हो? मैं राम के बिना नहीं जी सकूंगा।"

लेकिन इस अनुनय-विनय का कैकेयी पर कोई असर नहीं हुआ। उसने कहा, "मैंने जो मांगा है सो दीजिए, नहीं तो मना कर दीजिए। राम साधु है, राम की माता भी भली है। मैंने इस बात को पहचान लिया है। कौशल्या ने जैसी मेरी भलाई चाही है, मैं भी उसे वैसा ही फल दूंगी। सवेरा होते ही मुनियों का वेष धारणकर यदि रामचंद्र वन को नहीं चले जाते तो, हे राजन्, यह निश्चित समझिए कि मैं प्राण दे दूंगी और जगत में आपका अपयश होगा।"

राम साधु तुम्ह साधु सयाने।
राममातु भलि सब पहिचाने।
जस कौसिलाँ मोर भल ताका।
तस फलु उन्हहि देउं करि साका।

GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA

होत प्रातु मुनिबेष धरि जौं न रामु बन जाहिं ।
मोर मरन राउर अजसु नृप समुझिअ मन माहिं ।।

कैकेयी की ऐसी कड़वी बात सुनकर महाराज दशरथ बहुत दुखी हुए। रातभर उनको नींद नहीं आई। 'राम-राम' रटते रहे। सवेरा हुआ। सारे नगर में राजतिलक की तैयारी हो रही थी। आनंद छा रहा था। लेकिन महाराज दशरथ कैकेयी के कोप-भवन में पड़े हुए, "हे राम ! हे राम !" चिल्ला रहे थे और कैकेयी उनको मर्मभेदी वचन सुनाकर और भी व्याकुल कर रही थी। महाराज ने कैकेयी से बार-बार प्रार्थना की। कहा, "राम की तो सारी दुनिया प्रशंसा कर रही है और करेगी, लेकिन तुम्हारा कलंक और मेरा पछतावा कभी नहीं मिटेगा। तुम मेरे सामने से चली जाओ। जीवनभर अब तुम मुझसे मत बोलना। अभागिन, तुम तांत के लिए गाय को मार रही हो। याद रखना, अंत में तुम्हें पछताना होगा।"

लेकिन कैकेयी पर इन बातों का कोई असर नहीं हुआ। सवेरा होने पर वीणा, बांसुरी और शंख की ध्वनि होने लगी। राज-द्वार पर मंत्रियों और सेवकों की भीड़ लग गई। राजा को जागा हुआ न देखकर सुमंत्र अंदर आये और जब उन्होंने राजा की वह दशा देखी तो डर के मारे कुछ पूछ न सके। कैकेयी ने ही कहा, "तुम जाकर राम को बुला लाओ।" वह तुरंत राम को बुलाने चले। मार्ग में लोग तरह-तरह के प्रश्न पूछते थे और वह उनको किसी तरह समझा-बुझाकर आगे बढ़ जाते थे।

: ४ :

पुत्र की कर्त्तव्य-निष्ठा

राम ने आकर जब राजा की यह दशा देखी तो वह मां से पूछने लगे, "पिताजी की यह अवस्था कैसे हुई है ? उनका दुःख कैसे दूर हो सकता है ?" इसपर कैकेयी ने अपने दो वरदान मांगने की बात कह सुनाई।

सुनकर राम तनिक भी चिंतित न हुए। मुस्कराकर सुंदर वचन बोले, "माता, वह पुत्र भाग्यशाली है जो माता-पिता के वचनों का पालन करता है। हे जननी, माता-पिता को संतुष्ट करनेवाले पुत्र संसार में बड़ी कठिनता से प्राप्त होते हैं। वन में रहते हुए मैं मुनियों से मिलूंगा, इससे मेरा कल्याण होगा। उसपर पिताजी की और आपकी ऐसी इच्छा भी है। मेरे प्राणों से प्यारा भरत राज्य करेगा। मुझे तो ऐसा लगता है, मानों भगवान मुझपर बहुत प्रसन्न हैं। ऐसे समय मैं वन न जाऊं तो मूर्खों में मुझे सबसे पहला मानना चाहिए।"

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी,
जो पितु मातु बचन अनुरागी।
तनय मातु पितु तोषनिहारा,
दुर्लभ जननि सकल संसारा ।।

मुनिगन मिलनु बिसेषि बन, सबहि भांति हित मोर।
तेहि महं पितु आयसु बहुरि सम्मत जननी तोर ।।

भरतु प्रानप्रिय पावहि राजू,
बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू।

जौं न जाउं बन ऐसेहु काजा,
प्रथम गनिअ मोहि मूढ़समाजा ।।

कैकेयी राम की यह बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और उनकी प्रशंसा करने लगी। इतने में राजा की मूर्च्छा दूर हो गई। उन्होंने राम को अपने चरणों में प्रणाम करते देखा तो स्नेह से विकल होकर हृदय से लगा लिया। आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी। बार-बार देवताओं से विनती करने लगे कि किसी तरह राम बन न जायं। उनकी यह अवस्था देखकर राम बोले, "पिताजी, इस मंगल के समय स्नेह के वश होकर किसी प्रकार का सोच न कीजिए, प्रसन्न होकर मुझे आज्ञा दीजिए। आपकी आज्ञा का पालन करके और अपने जन्म का फल पाकर मैं जल्दी ही लौट आऊंगा। मैं माता से विदा मांगकर अभी आता हूं, फिर आपको प्रणाम करके वन चला जाऊंगा।"

आयसु पालि जनम फलु पाई,
ऐहउं बेगहिं होउ रजाई।
बिदा मातु सन आवउं मागी,
चलिहउं बनहि बहुरि पग लागी ।।

इतना कहकर रामचंद्रजी वहां से चले गये। राजा कुछ नहीं बोल सके। नगरभर में यह समाचार फैल गया। स्त्री-पुरुषों के दिल ऐसे मुरझा उठे जैसे वन में आग लगने से वृक्ष मुरझा जाते हैं। वे नारी के स्वभाव की निंदा करने लगे। भला, इस दुर्बुद्ध कैकेयी को इस समय क्या सूझी ? कुछ लोग तो इस बात पर विश्वास करने को भी तैयार नहीं होते थे। कुछ विधाता को दोष दे रहे थे। भला कहीं राम वन के योग्य हैं ! भरत तो राम को इतना प्यार करते हैं कि वह कभी राज्य नहीं करेंगे ! कैकेयी की सखियां उसे तरह-

तरह की सीख देने लगीं। बार-बार उससे प्रार्थना करने लगीं कि वह अपना वचन लौटा ले, लेकिन कैकेयी तो किसीकी बात को कान ही नहीं देती थी।

उधर राम माता कौशल्या के पास पहुंचे। उनके चरणों में प्रणाम किया। गद्‌गद् होकर माता ने उन्हें हृदय से लगा लिया। उन्हें तो अभी कुछ पता ही नहीं था। वह तो प्रसन्न होकर बार-बार उनकी बलैया लेने लगीं। लेकिन जब रामचंद्रजी ने उन्हें अपने वन जाने की बात सुनाई तो कौशल्या ऐसे सूख गईं, जैसे बरसात का पानी पड़ने से जवासा सूख जाता है।

सहमि सूखि सुनि सीतलि बानी,
जिमि जवास परें पावस पानी ।।

उनकी आंखों में पानी भर आया, शरीर कांपने लगा। फिर भी किसी तरह धीरज धरकर उन्होंने कहा, "यह सब किस कारण हुआ। तुम तो राजा को प्राणों से भी अधिक प्यारे थे ! फिर राजतिलक दिए जाने के इस शुभ अवसर पर उन्होंने किस अपराध से तुम्हें बन जाने की आज्ञा दी ?"

राम कुछ नहीं बोले, पर उनका रुख देखकर मंत्री-पुत्र ने उन्हें सब कथा कह सुनाई। अब तो उनकी दशा गूंगी-जैसी हो गई। धर्म और स्नेह दोनों ने उनकी बुद्धि को घेर लिया। पर अंत में धीरज धरकर बोलीं, "बेटा, पिता की आज्ञा का पालन करना पुत्र का धर्म है। उन्होंने तुमको वन जाने की आज्ञा दी, इसका मुझे तनिक भी दुःख नहीं। लेकिन मैं एक बात कहती हूं—"यदि केवल पिता की ही आज्ञा हो, तो माता को पिता से बड़ी मानकर बन मत जाओ। लेकिन यदि माता-पिता दोनों की आज्ञा है, तो वन तुम्हारे लिए सैकड़ों अयोध्या के समान है।"

इस प्रकार वह बारबार राम को समझाने लगीं। वह उन्हें जाने देना भी नहीं चाहती थीं, लेकिन रोक भी नहीं सकती थीं। वह इतनी दुखी थीं कि अपनेको भूलकर रामचंद्रजी के चरणों

सीताजी राम के चरणों में

में झुक गईं। राम ने उन्हें उठाकर गले से लगा लिया और प्यार-भरे वचन बोलकर उन्हें ढांढस बंधाने लगे। इसी समय सीताजी भी वहां आ पहुंचीं और राम के चरणों में सिर झुकाकर बैठ गईं। उनके नेत्रों से जल बह रहा था और वह अपने सुंदर नाखूनों

से धरती कुरेदते हुए मन-ही-मन बहुत-सी बातें सोच रही थीं। उनकी ऐसी दशा देखकर कौशल्या को और भी दुःख हुआ। कहने लगीं, "सीता बड़ी सुकुमार है। सास, ससुर और कुटुंबी सब उसको प्यार करते हैं। इसके पिता जनक राजाओं में शिरोमणि हैं। ससुर सूर्य-कुल के सूर्य हैं और पति सूर्य-कुल-रूपी कुमुद-वन को सजानेवाले चंद्रमा तथा रूप और गुण के भंडार हैं।

तात सुनहु सिय अति सुकुमारी,
सास ससुर परिजनहि पिआरी।
पिता जनक भूपालमनि ससुर भानुकुल भानु।
पति रविकुल कैरव बिपिन बिधु गुन रूप निधानु॥

"हे राम! ऐसी सीता भी तुम्हारे साथ जाना चाहती है। इसने तो कभी पलंग से नीचे पैर भी नहीं रखा। संजीवनी बूटी के समान मैं सदा उसकी रखवाली करती रहती हूं। कभी दीये की बत्ती उठाने को भी नहीं कहा। क्या तुम इसको अपने साथ वन ले जाओगे? यदि यह घर में रहे तो मुझको बहुत सहारा होगा।"

: ५ :

सीताजी को रोकने का प्रयत्न

माता की ऐसी बातें सुनकर राम सीताजी को समझाने लगे, "हे राजकुमारी, यदि तुम मेरा और अपना भला चाहती हो तो मेरे वचन मानकर यहीं रहो। इस प्रकार तुम मेरी आज्ञा का पालन करके सास की सेवा भी करोगी। घर में रहने से सब प्रकार से भला है। सास-ससुर की पूजा करने से बढ़कर दूसरा और कोई धर्म नहीं है। जब-जब माता मुझे याद करेंगी तो तुम अपनी कोमल वाणी से उन्हें पुरानी कथाएं सुनाकर समझाना। हे सुमुखि, मैं

सौगंध खाकर कहता हूं कि मैं केवल माता के लिए ही तुम्हें घर पर छोड़ रहा हूं, किसी और कारण से नहीं।"

आपन मोर नीक जौं चहहू,
बचनु हमार मानि गृह रहहू।
आयसु मोर सासु सेवकाई,
सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥
एहि ते अधिक धरमु नहिं दूजा,
सादर सासु ससुर पद पूजा।
जब जब मातु करहि सुधि मोरी,
होइहि प्रेम बिकल मति भोरी।
तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी,
सुंदरि समुझाएहु मृदु बानी।
कहउं सुभायं सपथ सत मोही,
सुमुखि मातु हित राखउं तोही ॥

यही नहीं, उन्होंने वन में होनेवाले क्लेशों और कष्टों का वर्णन भी किया। कहा, "तुम्हें कांटों और कंकड़ों से भरी जमीन पर चलना होगा। जमीन पर सोना होगा। पेड़ों की छाल के वस्त्र पहनने होंगे। कंद-मूल-फल खाने होंगे। वन में मनुष्यों को खानेवाले राक्षस रहते हैं। भयानक पशु-पक्षी झुंड-के-झुंड घूमते रहते हैं। हे हंसगामिनी, तुम वन जाने के योग्य नहीं हो।"

पति के ऐसे कोमल वचन सुनकर सीताजी के नेत्र भर आये। एकाएक उत्तर देते न बना। वह व्याकुल हो उठीं कि स्वामी मुझे छोड़ जाना चाहते हैं। फिर साहस करके उन्होंने कौशल्याजी से कहा, "मेरी ढिठाई क्षमा कीजिए। मैं आपके सामने उत्तर दे रही हूं। पति ने जो कुछ कहा है, मेरे भले के

लिए कहा है, लेकिन पति के वियोग से बढ़कर दूसरा दुःख इस संसार में नहीं है।" फिर रामचंद्रजी से बोली, "हे प्राणनाथ, हे दया के धाम, हे सुंदर सुखों को देनेवाले, हे सुजान, हे रघुकुल-रूपी-कुमुद को खिलानेवाले चंद्रमा, आपके बिना स्वर्ग भी मेरे लिए नरक है।

प्राननाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान।
तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद बिधु सुरपुर नरक समान॥

"हे स्वामी, सब नाते सुख के देनेवाले हैं, लेकिन पति के बिना स्त्री को ये सब सूरज से बढ़कर तपानेवाले हैं। भोग रोग के समान है। गहने भार रूप हैं। संसार नरक है। हे स्वामी, आपके बिना कहीं कोई सुख नहीं। जिस प्रकार जीव के बिना देह, जल के बिना नदी, वैसे ही, हे नाथ, पुरुष के बिना नारी है।

जिय बिनु देह नदी बिनु बारी,
तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।

"हे नाथ, आपके साथ वन में पशु-पक्षी ही मेरे कुटुंबी होंगे। पत्तों की झोंपड़ी मेरे लिए स्वर्ग होगी। वन के देवी-देवता सास-ससुर के समान मेरी देखभाल करेंगे। आपने बहुत-से दुःखों का वर्णन किया है, लेकिन, हे स्वामी, आपके वियोग से होनेवाले दुःखों के सामने ये कुछ भी नहीं हैं। मैं आपके चरण-कमलों को देखती रहूंगी तो मुझे तनिक भी थकावट नहीं होगी। मैं आपकी सेवा करूंगी। आपको कोई कष्ट न होने दूंगी। आपके रहते मेरी ओर कौन आंख उठाकर देख सकता है। यदि आप मुझे यहीं छोड़कर चले गए तो मुझे बहुत ही दुःख होगा।" यह कहते-कहते सीताजी बहुत व्याकुल हो उठीं। उनकी ऐसी दशा देखकर रामचंद्रजी ने कहा, "शोक छोड़कर तुम मेरे साथ वन में चलो। आज दुःखी

होने का अवसर नहीं है।" फिर उन्होंने माताजी के चरण छूकर आशीर्वाद प्राप्त किया। मां फिर व्याकुल हो उठीं और जब जानकीजी ने उनके चरण छुए तो उन्हें और भी क्लेश हुआ। लेकिन वह क्या कर सकती थीं ! बार-बार उनको हृदय से लगाने लगीं। अपने मन में धीरज रखकर उन्हें शिक्षा देने लगीं। आशीर्वाद दिया कि जबतक गंगा-जमना में जल की धारा बहती है तबतक तुम्हारा सौभाग्य अचल रहे। इस प्रकार सीताजी को सास ने अनेक प्रकार से आशीर्वाद और शिक्षाएं दीं और सीताजी बड़े प्रेम से बार-बार उनके चरण-कमलों में सिर नवाकर वहां से चली गईं।

बारहिं बार लाइ उर लीन्ही,
धरि धीरजु सिख आसिष दीन्ही।
अचल होउ अहिवात तुम्हारा,
जब लगि गंग-जमुन जलधारा।
सीतहि सासु असीस सिख दीन्हि अनेक प्रकार।
चली नाइ पद पदुम सिरु अति हित बारहिं बार॥

: ६ :

लक्ष्मण भी तैयार होगए

जब लक्ष्मणजी को यह समचार मिला तो वह भी व्याकुल हो उठे और शीघ्रता से रामचंद्रजी की ओर चले। उनका शरीर कांप रहा था। आंखों में आंसू भरे हुए थे। प्रेम से अधीर होकर उन्होंने रामचंद्रजी के पांव पकड़ लिये। वह कुछ कह नहीं सकते थे। वह ऐसे दीन हो रहे थे, जैसे जल से निकलने पर मछली होती है। मन-ही-मन सोच रहे थे कि न जाने अब क्या होनेवाला

है। रामचंद्रजी अब न जाने क्या करेंगे! मुझे साथ ले चलेंगे या छोड़ जायंगे!

समाचार जब लछिमन पाए,
व्याकुल बिलख बदन उठि धाए।
कंप पुलक तन नयन सनीरा,
गहे चरन अति प्रेम अधीरा॥
कहि न सकत कछु चितवत ठाढ़े,
मीनु दीनु जनु जल तें काढ़े।
सोचु हृदय बिधि का होनिहारा,
सबु सुखु सुकृतु सिरान हमारा॥
मो कहुं काह कहब रघुनाथा,
रखिहहिं भवन कि लेहहिं साथा॥

रामचंद्रजी ने जब भाई लक्ष्मण की इस प्रकार व्याकुलता देखी तो वह बड़े प्रेम से बोले—"हे तात, इस प्रकार अधीर होने से कोई लाभ नहीं। जो लोग माता-पिता, गुरु और स्वामी की आज्ञा मानते हैं, उनका जन्म धन्य है। हे भाई, तुम मेरी बात मानो। माता-पिता की सेवा करो। भरत और शत्रुघ्न घर पर नहीं हैं। महाराज बूढ़े और दुखी हैं। ऐसी अवस्था में तुमको अपने साथ ले जाना अच्छा नहीं होगा। सब लोग अनाथ हो जायंगे। इसलिए तुम यहीं रहो और सबको संतोष देते रहो, नहीं तो, हे तात, बहुत बुरी बात होगी। जिसके राज्य में प्रजा दुखी रहती है वह राजा नरक में जाता है।

मैं बन जाऊं तुम्हहि लेइ साथा।
होइ सबहि बिधि अवध अनाथा॥

गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू ।
सब कहुं परइ दुसह दुखभारू ।।
रहहु करहु सब कर परितोषू ।
नतरु तात होइहि बड़ दोषू ।।
जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी,
सो नृप अवसि नरक अधिकारी ।।

राम के ये वचन सुनते ही लक्ष्मण ऐसे सूख गए, जैसे पाला पड़ने पर कमल सूख जाता है । बोले, "मैं तो आपका दास हूं । आप मुझे यहां छोड़ जायंगे तो मैं क्या कर सकता हूं । आपने मुझे बहुत अच्छी सलाह दी है, लेकिन मैं क्या करूं । मैं तो आपके स्नेह में पला हुआ छोटा-सा बच्चा हूं । विश्वास रखिए, आपको छोड़कर मैं किसीको नहीं जानता । मेरे सबकुछ आप ही हैं । धर्म और नीति का उपदेश तो उसको देना चाहिए, जिसे यश, ऐश्वर्य या सद्गति से प्रेम हो । लेकिन जब मैंने मन-वचन-कर्म से आपके ही चरणों में प्रेम रखा है तो उसे कैसे छोड़ सकता हूं ।"

जब लक्ष्मणजी ने इस प्रकार कहा तो रामचंद्रजी ने उन्हें हृदय से लगा लिया और बोले, "भाई, जाओ, माताजी से आज्ञा ले आओ ।"

लक्ष्मणजी प्रसन्न होकर तुरंत अपनी माता सुमित्रा के पास पहुंचे और उनको सब कथा विस्तार से कह सुनाई । इस कथा को सुनकर सुमित्रा ऐसे सहम गईं, जैसे हिरनी चारों ओर वन में लगी हुई आग को देखकर सहम जाती है । उनकी यह अवस्था देखकर लक्ष्मणजी बहुत दुखी हुए । वह डर गए कि शायद मुझे माता जाने की आज्ञा न दें । लेकिन सुमित्रा बड़े प्यार से बोलीं—"बेटा, सीता तुम्हारी माता हैं और राम तुम्हारे पिता । जहां

राम रहते हैं वहीं अयोध्या है। जहां सूर्य का प्रकाश होता है, वहीं तो दिन निकलता है। यदि सीता, राम वन को जा रहे हैं तो तुम्हारा अयोध्या में कुछ काम नहीं।

सुमित्रा ने कहा, "बेटा, जहां राम रहते हैं, वहीं अयोध्या है।"

अवध तहां जहं राम निवासू,
तहइं दिवसु जहं भानु प्रकासू।

H-000781
GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA
BANGALORE-1.
0152,1TUL W3N

जौं पै सीय राम बन जाहीं,
अवध तुम्हार काज कछु नाहीं ।।

"मैं बलिहारी जाती हूं। तुम और मैं बड़े सौभाग्यशाली हैं जो तुम्हारे मन ने राम के चरणों में स्थान प्राप्त किया है। संसार में वही स्त्री वास्तव में पुत्रवती है, जिसका पुत्र राम-भक्त हो। जो स्त्री राम के विरोधी पुत्र को अपना हितू मानती है वह तो बांझ ही अच्छी। सब प्रकार के विकारों को त्यागकर, मन, वचन, कर्म से तुम वन में सीता और राम की सेवा करो। वही करना, जिससे रामचंद्र को वन में कोई क्लेश न हो। हे तात, मेरा यह उपदेश है। ऐसा काम करना, जिससे वन में तुम्हारे कारण राम और सीता सुख से रहें। माता, पिता, परिवार तथा नगर के सुखों को भूल जायं।"

इस प्रकार लक्ष्मणजी को शिक्षा देकर सुमित्राजी ने वन जाने की आज्ञा दी। फिर आशीर्वाद दिया कि सीता-राम के चरणों में तुम्हारा निर्मल और प्रगाढ़ प्रेम सदा नया बना रहे।

उपदेसु यहु जेहिं तात तुम्हरें राम सिय सुख पावहीं ।
पितु मातु प्रिय परिवार पुर सुख सुरति बन बिसरावहीं ।।
तुलसी प्रभुहि सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिष दई ।
रति होउ अबिरल अमल सिय रघुबीर पद नित नित नई ।।

: ७ :

माता-पिता और पुरवासियों की वेदना

इसके बाद माताजी के चरणों में सिर नवाकर लक्ष्मणजी तुरंत रामचंद्रजी के पास पहुंचे और उनके साथ ही राजभवन में आए। नगर के स्त्री-पुरुष आपस में चर्चा कर रहे थे कि विधाता

ने बनी हुई बात बिगाड़ दी। वे ऐसे व्याकुल हो रहे थे जैसे शहद के छिन जाने पर शहद की मक्खियां व्याकुल होती हैं। सिर-धुन-धुनकर पछता रहे थे और राजद्वार पर भीड़ जमा हो रही थी। रामचंद्रजी के आने का समाचार पाकर मंत्रियों ने राजा को उठाकर बिठाया। सीतासहित राम-लक्ष्मण को वन जाने के लिए तैयार देखकर राजा और भी विचलित हो उठे। प्रेम के वश होकर वह बार-बार उन्हें गले से लगाने लगे। राम ने कहा, "पिताजी, आशीर्वाद दीजिए और आज्ञा दीजिए। यह तो हर्ष का समय है, इस समय आप शोक क्यों कर रहे हैं? आपको ऐसे देखकर लोग समझेंगे कि आप कर्तव्य नहीं करना चाहते। इससे आपकी निंदा होगी।"

महाराज ने इस समय भी रामचंद्रजी को वन जाने से रोकने का प्रयत्न किया, लेकिन सफल न हो सके। इसपर उन्होंने सीताजी को हृदय से लगाकर बहुत प्रकार समझाया। वन के कष्टों का वर्णन किया। मंत्री सुमंत्र की पत्नी और गुरु-पत्नी अरुंधती सब चतुर स्त्रियों ने उन्हें प्यार से समझाया, लेकिन वे प्यार-भरी और मधुर बातें सीताजी को अच्छी नहीं लगीं। वह व्याकुल हो उठीं। संकोचवश उत्तर न दे सकीं।

उधर इन बातों को सुनकर कैकेयी तमककर उठी और मुनियों के वस्त्र राम के आगे रखे, फिर कोमल वाणी में कहा—"हे राम, राजा तुमको प्राणों से भी अधिक प्यार करते हैं। वह इस दुर्बलता के कारण शील और स्नेह नहीं छोड़ेंगे। पुण्य, यश और परलोक ये चाहें सब नष्ट हो जायं, पर वह तुम्हें वन जाने को नहीं कहेंगे। यह जानकर जो तुम्हें अच्छा लगे, वह करो।" माताजी के ये वचन सुनकर राम बड़े सुखी हुए, लेकिन राजा को ये वचन

बाण के समान लगे। सोचने लगे, मेरे प्राण कहां अटके हुए हैं और वह मूर्च्छित हो गए। किसीको कुछ नहीं सूझा। सब व्याकुल हो रहे थे। रामचंद्रजी ने तुरंत मुनि का वेश बनाया और माता-पिता को सिर नवाकर वहां से चले गए।

नृपहि प्रानप्रिय तुम्ह रघुबीरा।
सील सनेह न छाड़िहि भीरा॥
सुकृत सुजसु परलोकु नसाऊ।
तुम्हहि जान बन कहिहि न काऊ॥
अस बिचारि सोइ करहु जो भावा,
राम जननिसिख सुनि सुखु पावा॥
भूपहि बचन बानसम लागे,
करहिं न प्रान पयान अभागे॥
लोग बिकल मुरुछित नरनाहू,
काह करिअ कछु सूझ न काहू॥
रामु तुरत मुनिवेषु बनाई,
चले जनक जननिहि सिरु नाई॥

: ८ :

प्रस्थान

राज-महल से चलकर रामचंद्रजी वशिष्ठजी के द्वार पर आए और सब मनुष्यों को समझाने लगे। ब्राह्मणों को उन्होंने वर्ष भर का भोजन दान में दिया। फिर दूसरे याचकों को धन देकर संतुष्ट किया। उन्होंने अपने दास-दासियों को गुरूजी को सौंपा और प्रार्थना की, "हे गुरुदेव, इन सबकी माता-पिता के समान

देखभाल करते रहिए ।" फिर उन्होंने पुरवासियों की बार-बार हाथ जोड़कर प्रार्थना की, "आप सब लोग ऐसे कार्य करें, जिससे मेरी माताएं दुखी न हों ।" उसके बाद वे देवताओं को मनाकर और उनका आशीर्वाद प्राप्त कर चल पड़े। सारे नगर में हाहाकार मच उठा ।

वन-गमन

उधर जब राजा की मूर्च्छा दूर हुई तो उन्होंने सुमंत्र को बुलवाया और कहा, "राम चले गये, लेकिन मैं जीवित हूं । इतना दुःख पाकर भी मेरे प्राण नहीं निकलते । हे मित्र, तुम रथ लेकर

श्रीराम के साथ जाओ और दो-चार दिन वन में घुमाकर उन्हें यहां ले आओ। यदि वे दोनों भाई न लौटें तो उनसे कहना कि सीता को तो लौटा ही दें। यदि वह भी लौट आई तो मेरे प्राणों का सहारा हो जायगा, नहीं तो मेरा अंत आ ही गया है।" इतना कहकर राजा फिर मूर्च्छित होगये।

राजा की आज्ञा पाकर सुमंत्र रथ लेकर वहां पहुंचे, जहां राम थे। उन्होंने उनसे राजा की इच्छा कह सुनाई और विनती करके उनको रथ पर चढ़ाया। वे सब रथ पर चढ़े और मन-ही-मन अयोध्या को सिर नवाकर बन की ओर चले गये। सारा नगर राम के वियोग में डूब गया।

'मंडल' द्वारा प्रकाशित प्राप्य साहित्य

गांधीजी लिखित

प्रार्थना प्रवचन (भाग १)	३)
,, ,, (भाग २)	२॥)
गीता-माता	४)
पंद्रह अगस्त के बाद	१॥), २)
धर्मनीति	१॥), २)
द० अफ्रीका का सत्याग्रह	३॥)
मेरे समकालीन	५)
आत्मकथा	२॥), ४)
आत्म-संयम	३)
गीता-बोध	॥)
ग्राम-सेवा	।=)
मंगल-प्रभात	।=)
सर्वोदय	।=)
नीति-धर्म	।=)
आश्रमवासियों से	।=)
हमारी मांग	१)
सत्यवीर की कथा	।)
संक्षिप्त आत्मकथा	१॥)
हिंद-स्वराज्य	॥।)
अनीति की राह पर	१)
बापू की सीख	॥)
गांधी-शिक्षा (तीनभाग)	१=)
आज का विचार (दो भाग)	॥।)
ब्रह्मचर्य (दो भाग)	१॥।)
गांधीजी ने कहा था ५ भाग	१।)

विनोबाजी की लिखी

विनोबा-विचार : २ भाग	३)
गीता-प्रवचन	१॥)
शान्ति-यात्रा	१॥)
जीवन और शिक्षण	२)
स्थितप्रज्ञ-दर्शन	१)
ईशावास्यवृत्ति	॥।)
ईशावास्योपनिषद्	=)
उपनिषदों का अध्ययन	१)
सर्वोदय-विचार	१=)
स्वराज्य-शास्त्र	॥।)
भू-दान-यज्ञ	।)
गांधीजी को श्रद्धांजलि	।=)
राजघाट की संनिधि में	॥=)
विचार-पोथी	१)
सर्वोदय का घोषणा पत्र	।)
जमाने की मांग	=)

नेहरूजी की लिखी

मेरी कहानी	८)
हिन्दुस्तान की समस्याएं	२॥)
लड़खड़ाती दुनिया	२)
राष्ट्रपिता	२)
राजनीति से दूर	२)
हमारी समस्याएं (२ भाग)	१)
हिन्दुस्तान की कहानी सं०	५)

अन्य लेखकों की

आत्मकथा (राजेन्द्रबाबू)	८)
गांधीजी की देन ,,	१॥)
गांधी-मार्ग ,,	=)
महाभारत-कथा (राजाजी)	५)
कुब्जा सुन्दरी ,,	२)
शिशु-पालन ,,	॥)
मैं भूल नहीं सकता	२॥)
कारावास-कहानी (सु.नै.)	१०)
गांधी की कहानी (लु.फि.)	४)
भारत-विभाजन की कहानी	४)
गांधी श्रद्धांजलि ग्रंथ	३)
इंग्लैंड में गांधीजी	२)
बा, बापू और भाई	॥)
गांधी-विचार-दोहन	१॥)
अहिंसा की शक्ति (ग्रेग)	१॥)
सत्याग्रह-मीमांसा	३॥)
बुद्धवाणी (वियोगी हरि)	१)
सन्त सुधासार (,,)	११)

MAHATMA GANDHI MEMORIAL LIBRARY
5, Kumara Park (East), Bangalore-1

DATE LABLE

CL. No 0152,1T01 W3N58 Accn. No H:000781

This book ought to be returned on or before the date last marked below, or fines will be incurred.

Due Date	Ticket No.	Inls.	Due Date	Ticket No.	Inls.

CALL No....................

GANDHI SMARAKA GRANTHALAYA
DATE.........................
ACC. No.........................
CALL No.........................

Mahatma Gandhi Memorial Library
5, Kumara Park (East), Bangalore-1

BOOK CARD

W3N58
CL No. 0152,1PRE ..... Acc. No. H·000781

Author. PREMI (Vishwambhar Sahay)

Title Ram Vangaman:

Ticket No.	Issue Date	Return Date	Ticket No.	Issue Date	Return Date

0152,1PRE
W3N58
H·000781

तुलसी-राम-कथा की पुस्तकें

१. राम-जन्म
२. धनुष-यज्ञ
३. राम-विवाह
४. राम-वनगमन
५. भरत-भेंट
६. पंचवटी में
७. सीता-हरण
८. सुग्रीव से मित्रता
९. सीता की खोज

आदि-आदि

प्रत्येक का छः आना

सस्ता साहित्य मण्डल

४